

मनु के राजनीतिक विचारों का आलोचनात्मक व्याख्या करें।

हिन्दू धर्म ग्रंथों में मनु का नाम सम्मान और आदर के साथ मिलता है। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार मनु मानव जाति का जनक था। ऋग्वेद में बार-बार मनु को मानव सृष्टि का प्रवर्तक और समस्त मानव जाति का पिता कहा गया है। पुराणों में मनु का उल्लेख 24 बार हुआ है। मनुस्मृति में भी मनु का परिचय दिया गया। मनु मानव जाति के पूर्व पुरुष हैं। जब भगवान विष्णु ने सृष्टि रचने का विचार किया तो सृष्टि रचने की इच्छा के साथ ही नाभि प्रदेश से कमल और उस पर आसीन ब्रह्मा प्रकट हुए। ब्रह्मा ने सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार को प्रकट किया। सृष्टि वृद्धि के लिए ब्रह्माजी ने स्वयं को अर्द्ध नारीश्वर रूप में आधा भाग स्त्री और आधा भाग पुरुष का संयोजित किया। उनसे स्वयं मनु और उनकी सहचरी शतरूपा उत्पन्न हुई। मनु और शतरूपा के मारीच, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलङ्ग, ऋतु, प्रचेता, वशिष्ठ, भृगु, नारद दस प्रजापति उत्पन्न हुए। इन प्रजापतियों से सात अन्य मनु तेजस्वी महर्षि उन्नत हुए तथा यहीं से आगे सृष्टि वृद्धि का क्रम निरन्तर चलता रहा। मनुस्मृति में कहा गया है कि प्रथम मनु ने उन धर्मों को घोषित किया जिन्हें ईश्वर ने मनुष्यों के लिए मनु को बताया था। मनु अमर और शाश्वत हैं।

मत्स्य पुराण के अनुसार प्रत्येक मन्वन्तर का एक मनु होता है। पुराण चौदह मनु की चर्चा करते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर अरबों वर्ष का होता है तथा प्रत्येक मन्वन्तर का स्वामी एक मनु होता है। उसी से मन्वन्तर का नाम जाना जाता है। अब तक छह मनु का शासन काल हो चुका है। वर्तमान में सातवें मनु वैवस्वत मनु का शासन काल है। भविष्य में अभी सात मनु का शासनकाल और आना है। प्रत्येक मन्वन्तर में चार युग (कृत, त्रेता, द्वापर व कलियुग) होते हैं। इनकी समाप्ति पर धार्मिक कार्य करने वाला तथा धर्म का ज्ञाता पुरुष नए मन्वन्तर के लिए बच जाता है। वही पुरुष नए मन्वन्तर और युग को प्राचीन धर्म और संस्थाओं का ज्ञान कराता है तथा नये युग और मन्वन्तर के अनुरूप पुराने धर्म को घोषित करता है। इस प्रकार प्रत्येक मन्वन्तर का एक मनु होता है, मेघा तिथि, जो मनुस्मृति के टीकाकार हैं, का कहना है कि मनु किसी व्यक्ति का नाम नहीं अपितु पद का नाम है।

मनु के राज्य की उत्पत्ति संबंधी विचार

मनु स्मृति, के सातवें अध्याय में राज्य संबंधी विचार प्रस्तुत किये गये हैं। इसी में राज्य की उत्पत्ति एवं साव्यवी सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं। मनु ने राज्य की उत्पत्ति ईश्वर के द्वारा मानी है। इसमें कई जगह सामाजिक अनुबंध सिद्धान्त का भी आभास दिखता है। मनु स्पष्ट करता है कि राज्य के पूर्व मानव की स्थिति, कष्टपूर्ण, असहनीय थी। इस कष्ट के निवारण के लिये ईश्वर इन्द्र, वायु, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, कुबेर, यम आदि ने सारभूत अंश से राजा का निर्माण किया। इन आठ उत्कृष्ट तत्वों से मिलकर राजा ने न केवल मानव दुखों को दूर किया वरन् उनके कल्याण को सुनिश्चित किया। इन आठ तत्वों से बना राजा विश्व रक्षक, पोषक, समृद्धिकारक होता है। निश्चित रूप से मनु राज्य की उत्पत्ति के दैवीय सिद्धान्त का पोषक है परन्तु उसके इस सिद्धान्त में सामाजिक समझौते के सिद्धान्त की झलक भी दिखती है। राजा सर्वोच्च है, वह ही सभी के कल्याण का माध्यम है। "मनुस्मृति" में राजा का यह दायित्व है कि वह इस भूमि पर सभी दिशाओं में शान्ति और व्यवस्था कायम रखे।

मनु का दैवीय उत्पत्ति का सिद्धान्त तथा पाश्चात्य दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त में अंतर

प्रायः मनु के दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त की तुलना पाश्चात्य दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त से की जाती है। इन दोनों में काफी अंतर दिखता है। पाश्चात्य विद्वानों ने दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त के द्वारा राजा को निरंकुश सत्ता प्रदान की है।

मनु राजा को निरंकुश सत्ता का पक्षधर नहीं है। मनु ने राजा को धर्म, नैतिकता के अधीन रखा है। उसने इस बात पर बल दिया है कि राजा सदा प्रजा का पालन करे तथा उसकी रक्षा करे। राजा को देव का अंश बताया गया परन्तु इसमें उसके गुणों पर योग्यता पर बल दिया गया है न कि उसके अधिकार, शक्तियों एवं मनमानी पर है। यहां पर मोरबानी का कथन प्रासंगिक लगता है कि, "राजा को समझना चाहिए कि वह धर्म के नियमों के अधीन है। कोई भी राजा धर्म के विरुद्ध व्यवहार नहीं कर सकता है। धर्म राजाओं एवं मनुष्यों पर एक समान ही शासन करता है। इसके अतिरिक्त राजा -राजनीतिक प्रभु जनता के भी अधीन है। वह अपनी शक्तियों के प्रयोग में जनता की आज्ञा पालन की क्षमता से सीमित है।

मनु के राजा संबंधी विचार

मनु ने राजा को अनेक राजाओं के सारभूत अंश से निर्मित बताया है। राजा ईश्वर से उत्पन्न है अतः उसका अपमान नहीं हो सकता है। राजा से द्वेष करने का अर्थ है कि स्वयं को विनाश की ओर ले जाना। "मनु स्मृति" में तो यहां तक लिखा है कि राजा में अनेक देवता प्रवेश करते हैं। अतः वह स्वयं एक देवता बन जाता है।

मनु स्मृति के अनुसार, "ऐसा राजा इन्द्र अथवा विद्युत के समान एश्वर्यकर्ता, पवन के समान सबके प्राणाव, प्रिय तथा हृदय की बात जानने वाला, यम के समान पक्षपात रहित न्यायधीश, सूर्य के समान न्याय, धर्म तथा विद्या का प्रकाश, अग्नि के समान दुष्टों को भस्म करने वाला, वरूण के समान दुष्टों को अनेक प्रकार से बांधने वाला, चन्द्र के समान श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्द देने वाला तथा कुबेर के समान कोष भरने वाला होना चाहिए।"

मनु के शासन संबंधी विचार

मनु के अनुसार शासन का मुख्य उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति में सहायक होना है। अतः राजा को अपने सहयोगियों के माध्यम से (मंत्रियों) इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। मनु स्मृति में स्पष्ट किया गया है कि राजा को सदैव लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए, जो प्राप्त हो गया है उसे सुरक्षित रखने का प्रयास करना चाहिए। राजकोष को भरने का सदैव प्रयास करना चाहिए। समाज के कमजोर एवं सुपात्र लोगों को दान करना चाहिए। राजा को प्रजा के साथ पुत्रवत् वर्तव्य करना चाहिए तथा राष्ट्रहित में कठोर भी हो जाना चाहिए। राजा को न्यायी, सिद्धान्तप्रिय तथा मातृभूमि से प्रेम करने वाला होना चाहिए।

राजा को राजकार्य में सहायता देने के लिए मंत्रियों की व्यवस्था है। "मनु स्मृति" में "मंत्री" शब्द का प्रयोग नहीं है परन्तु सचिव शब्द का प्रयोग कई बार मिलता है। मनु स्मृति में कहा गया है कि आदमी से सरल काम भी मुश्किल हो जाता है। अतः शासन के जटिल कार्यों के लिये मंत्री नियुक्त किये जाने चाहिए। वे विद्वान, कर्तव्यपरायण, शास्त्रज्ञाता, कुलीन तथा अनुभवी होने चाहिए। वह शासन कार्य में एकांत में तथा अलग-अलग तथा आवश्यकतानुसार संयुक्त मंत्रणा करनी चाहिए। मंत्रियों को उनकी योग्यतानुसार कार्य सौंपना चाहिए। यहां पर मनु स्पष्ट करता है सूर, दक्ष और कुलीन सदस्य को वित्त विभाग, शुचि आचरण से युक्त व्यक्ति को रत्न एवं खनिज विभाग, सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता मनोवैज्ञानिक, अन्तःकरण से शुद्ध तथा चतुर कुलीन व्यक्ति को संधि विग्रह विभाग का अधिष्ठाता बनाया जाना चाहिए। मंत्रिपरिषद् के अमात्य नामक व्यक्ति का दण्ड विभाग, सेना विभाग तथा राजा को राष्ट्र एवं कोष अपने अधीन रखना चाहिए। इनमें से वह ब्राह्मणों को विशेष महत्त्व देने पर बल देता है।

मनु के प्रादेशिक प्रशासन संबंधी विचार

मनु ने प्रशासनिक व्यवस्था संबंधी निर्देश अपनी पुस्तक "मनु स्मृति" में दिये हैं। मनु का स्पष्ट मत है कि राजा दो, तीन, पांच और सौ गांवों के बीच अपना राज स्थान स्थापित करें तथा यहां शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिये योग्य कर्मचारी नियुक्त करें। मनु स्मृति में राज्य को क्षेत्रीय आधार पर पुर तथा राष्ट्र को विभाजित किया गया है। पुर या दुर्ग से आशय राजधानी से है जो चारों ओर से सुरक्षित सुविधाओं से पूर्ण तथा स्वस्थ भू-भाग में बसाई जानी चाहिए। शासन को व्यवस्थित रूप से संचालित करने के लिये राष्ट्र को छोटी-बड़ी बस्तियां में विभाजित करना चाहिए। मनुस्मृति में स्पष्ट रूप से एक ग्राम, दस ग्राम, सौ ग्राम तथा एक हजार ग्रामों की अलग-अलग संगठनों की व्यवस्था है। ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई है इसके अधिकारी को ग्रामिक कहा जाता है।

मनु के अनुसार ग्रामिक का मुख्य कार्य शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना है। इसको ही राजस्व एकत्र कर 10 ग्रामों के

अधिकारी के पास भेजना है। 10 ग्रामों के अधिकारी को दशग्रामपति कहा जाता है। बीस ग्राम के अधिकारी को विशंती, सौ ग्रामों के अधिकारी को शती, तथा एक हजार ग्रामों के पति को सहस्रपति कहा गया है। इन सभी अधिकारियों के कार्यों के निरीक्षण उच्च अधिकारी करता है। प्रत्येक अधिकारी के वेतन का भी उल्लेख मनु स्मृति में मिलता है। ग्रामों के अतिरिक्त नगरों के प्रशासन की भी व्यवस्था की गई है। नगर अधिकारी को स्वार्थ चिन्तक नाम दिया गया है।

मनु की कानून न्याय एवं दण्ड व्यवस्था

मनु स्मृति में सदैव राजा के न्यायपूर्ण आचरण पर बल दिया गया है। न्याय ही दण्ड का आधार है। मनु का यह मानना था कि दण्ड के भय के कारण ही लोग स्थिर रहते हैं। मनु का कहना है कि राजा का यह कर्तव्य है कि वह देश, काल, अपराध की गुणता आदि पर विचार करके ही अपराधियों को दण्ड देना चाहिए। मनु का मानना है कि राजा दण्ड के भय से ही शासन करता है। यदि राजा अपराधियों को दण्ड न दे तो बलवान लोग दुर्बलों को वैसे ही पकाने लगेंगे जैसे मछलियों को लोहे की छड़ में छेदकर पकाया जाता है। राजा का यह परम कर्तव्य है कि वह राज्य में न्यायोचित दण्ड की व्यवस्था करें। राजा को सदैव तत्पर रहते हुए कुल, जाति, गण और जनपद में जो भी अपने धर्म से विचलित हो तो राजा उन्हें यथोचित दण्ड की व्यवस्था करता है।

मनु ने दण्ड के चार प्रकार बताये हैं--

1. धिगदण्ड
2. वाग्दण्ड
3. धनदण्ड
4. वधदण्ड

कानून अथवा विधि संबंधी विचार

मनु ने कानून निर्माणके लिये परिषद अथवा विधायिका का उल्लेख किया है। परिषद के सन्दर्भ में उसका स्पष्ट मत है कि इसका निर्धारण बौद्धिक क्षमता से होना चाहिए न कि संख्या के आधार पर। उसने स्पष्ट किया है कि इसके दस सदस्यों में तीन वेद के ज्ञाता, एक निर्वृत्ता, एक भीमांसाकर, एक निसक्त, एक धर्म शास्त्र का कहने वाला तथा तीन व्यक्ति मुख्य व्यवसायों के होने चाहिए। मनु यह भी स्पष्ट करता है कि यदि ऐसे दस व्यक्ति न मिलें तो योग्य वेदों के जानकार तीन व्यक्ति ही काफी हैं।

मनु के न्याय संबंधी विचार

मनु स्मृति में न्याय व्यवस्था का विस्तृत विवेचन किया जाता है। मनु के अनुसार सामान्यतः दो प्रकार के विवाद होते हैं हिंसा के कारण उत्पन्न विवाद तथा धन संबंधी विवाद मनु का मानना है कि राजा को स्वयं विवादों का समाधान करना चाहिए। यदि वह स्वयं न कर पाये तो योग्य ब्राह्मण को नियुक्त किया जाना चाहिए। राजा द्वारा नियुक्त ब्राह्मण भी ऐसे तीन अन्य व्यक्तियों के साथ न्यायालय में न्याय करना चाहिए। मनु अपेक्षा करता है कि सभी विवादों का निर्णय पूर्ण निष्पक्षता से करना चाहिए। यदि सत्य असत्य से पराजित होती है तो उसके सदस्य भी पाप से नष्ट हो जाते हैं। मनु की स्पष्ट मान्यता थी कि न्यायधीश वेदों का जानकार ब्राह्मण व्यक्ति को ही होना चाहिए। शूद्रों को यह महत्वपूर्ण दायित्व नहीं देना चाहिए। न्यायधीशों को शारीरिक भाषा, मुख संकेत तथा मनोविज्ञान समझने की क्षमता रखनी चाहिए। जहां पर निर्णय हो उस स्थान का सभा कहा जाता है। सभा के न्यायधीश को सत्य की रक्षा के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ होना चाहिए। सत्यता की जांच करने के लिये लिखित युक्ति तथा साक्षी आदि का परीक्षण करना चाहिए। मनु ने प्रमाणों को भी दो भागों में बांटा है--

मनु के कर व्यवस्था संबंधी विचार

करारोपण के संबंध में भी मनुस्मृति में व्यापक व्यवस्था की गई है। मनु भी प्रजा के साथ पुत्रवत संबंध रखने का हिमायती था। उसकी मान्यता थी कि प्रजा से धोड़ा-धोड़ा कर ही लेना चाहिए। वह स्पष्ट करता है कि कर न लेने से राजकोष खाली होता है और राज्य कमजोर होता है वहीं अत्याधिक, दमनकारी कर नीति से प्रजा की जड़ तथा विश्वास घटता है। कर का निर्धारण सदैव न्यायपूर्ण होना चाहिए। वह कहता है कि कर लगाने का उद्देश्य विलासिता नहीं वरनजनकल्याण होना चाहिए। मनु स्मृति में कर की मात्रा का भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है। मनु के अनुसार पशु एवं स्वर्ण का 50 वां भाग, धान्य का छठां भाग, आठवा और बारहवां भाग लेना चाहिए। उसकी मान्यता थी कि अत्याधिक वृद्ध, लंगड़े तथा अंधों से कर नहीं लेना चाहिए। वह स्पष्ट करता है कि कारीगरों, श्रमिकों, बोझा ढोने वालों से एक महीने में एक दिन का काम लेना चाहिए। प्रजा से कर के रूप में ली जाने वाली सामग्री को उसने बलि कहा। व्यापारियों से लिया जाने वाला कर शुल्क कहलाया। किसी व्यक्ति से लिया गया आर्थिक दण्ड अथवा जुर्माना दण्ड कहलाया। उसने इसके अतिरिक्त संतरण कर, पशुकर, आयकर का भी उल्लेख किया है।